P. R. No.: DL(S)-17/3082/2012-14
Rgn. No.: DELHIN/2000/2473
Date of Post : 27-28

SEVA-DHAM Plus
Since 1994
............The Wellness Center
(YOGA, AYURVEDA, NATUROPATHY & PHYSIOTHERAPY)

Relax Your Body, Mind & Soul In A Spiritual Environment

Truly rejuvenating treatment packages through
Relaxing Traditional Kerala Ayurvedic Therapies

KH-57, Ring Road, (Behind Indian Oil Petrol Pump), Sarai Kale Khan, New Delhi - 110013
Ph. : +91-11-2632 0000, +91-11-2632 7911 Fax : +91-11-26821348 Mob. : +91-9868 99 0088, +91-9999 60 9878
Website : www.sevadham.info E-mail : contact@sevadham.info

प्रकाशक व मुद्रक : श्री अरुण तिवारी, मानव मंदिर मिशन ट्रष्ट (रजि.)
के.एच.–57 जैन आश्रम, रिंग रोड़, सराय काले खाँ, इंडियन ऑयल पेट्रोल पम्प के पीछे, पो. बो.–3240, नई दिल्ली–110013, आई. जी. प्रिन्टर्स 104 (DSIDC) ओखला फेस–1 से मुद्रित।
संपादिका : श्रीमती निर्मला पुगलिया

कवर पेज सहित
36 पृष्ठ

मूल्य 5.00 रूपये
दिसम्बर, 2013

रूपरेखा

जीवन मूल्यों की प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

सन् 2013 को सांस्कृतिक विदाई देती हुई मानव मंदिर गुरूकुल की नन्ही-प्यारी बालिकाएं।

रूपरेखा

जीवन मूल्यों की प्रतिनिधि मासिक पत्रिका

वर्ष : 13 अंक : 12 दिसम्बर, 2013

: मार्गदर्शन :
पूज्या प्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्री जी

: संयोजना :
साध्वी वसुमती
साध्वी पद्मश्री

: परामर्शक :
श्रीमती मंजुबाई जैन

: सम्पादक :
श्रीमती निर्मला पुगलिया

: व्यवस्थापक :
श्री अरूण तिवारी

वार्षिक शुल्क : 60 रुपये
आजीवन शुल्क : 1100 रुपये

: प्रकाशक :
मानव मंदिर मिशन ट्रस्ट (रजि.)
पोस्ट बॉक्स नं. : 3240
सराय काले खाँ बस टर्मिनल के सामने, नई दिल्ली - 110013
फोन नं.: 26315530, 26821348
Website: www.rooprekha.com
E-mail: contact@manavmandir.info

इस अंक में

01. आर्ष-वाणी - 5
02. बोध-कथा - 5
03. शाश्वत स्वर - 6
04. गुरूदेव की कलम से - 7
05. चिंतन-चिरंतन - 12
06. कहानी - 17
07. कविता - 18
08. ब्रह्मचारी भीष्म - 19
09. बेताल पच्चीसी-3 - 22
10. लोक-कथा - 24
11. ज्ञानामृत - 26
12. चुटकुले - 26
13. स्वास्थ्य - 27
14. पहेलियां - 29
15. बोलें-तारे - 30
16. समाचार दर्शन - 32
17. झलकियां - 33

रूपरेखा-संरक्षक गण

श्री वीरेन्द्र भाई भारती बेन कोठारी, ह्युस्टन, अमेरिका
डॉ. प्रवीण नीरज जैन, सेन् फ्रेंसिस्को
डॉ. अंजना आशुतोष रस्तोगी, टेक्सास
डॉ. कैलाश सुनीता सिंघवी, न्यूयार्क
श्री शैलेश उर्वशी पटेल, सिनसिनाटी
श्री प्रमोद वीणा जवेरी, सिनसिनाटी
श्री महेन्द्र सिंह सुनील कुमार डागा, बैंकाक
श्री सुरेश सुरेखा आबड़, शिकागो
श्री नरसिंहदास विजय कुमार बंसल, लुधियाना
श्री कालू राम जतन लाल बरड़िया, सरदार शहर
श्री अमरनाथ शकुन्तला देवी, अहमदगढ़ वाले, बरेली
श्री कालूराम गुलाब चन्द बरड़िया, सूरत
श्री जयचन्द लाल चंपालाल सिंघी, सरदार शहर
श्री भंवरलाल उम्मेद सिंह शैलेन्द्र सुराना, दिल्ली
श्रीमती कमला बाई धर्मपत्नी स्व. श्री मांगेराम अग्रवाल, दिल्ली
श्री प्रेमचन्द ओमप्रकाश जैन उत्तमनगर, दिल्ली
श्रीमती मंगली देवी बुच्चा धर्मपत्नी स्व. शुभकरण बुच्चा, सूरत
श्री पी.के. जैन, लॉर्ड महावीरा स्कूल, नोएडा
श्री द्वारका प्रसाद पतराम, राजली वाले, हिसार
श्री हरबंसलाल ललित मोहन मित्तल, मोगा, पंजाब
श्री पुरुषोत्तमदास बाबा गोयल, सुनाम, पंजाब
श्री विनोद कुमार सुपुत्र श्री बीरबल दास सिंगला,
श्री अशोक कुमार सुनीता चोरड़िया, जयपुर
श्री सुरेश कुमार विनय कुमार अग्रवाल, चंडीगढ़
श्री देवकिशन मून्दडा विराटनगर नेपाल
श्री दिनेश नवीन बंसल सुपुत्र
श्री सीता राम बंसल (सीसवालिया) पंचकूला
श्री हरीश अलका सिंगला लुधियाना पंजाब
श्री केवल आशा जैन, टेम्पल, टेक्सास
श्री चैनरूप सुशील कुमार पारख, हनुमानगढ़
श्री श्यामलाल वीणादेवी सातरोदिया, हिसार
श्री उदयचन्द राजीव डागा, ह्युस्टन
श्री हेमेन्द्र, दक्षा पटेल न्यूजर्सी
श्री प्रवीण लता मेहत्ता ह्युस्टन
श्री अमृत किरण नाहटा, कनाडा
श्री गिरीश सुधा मेहता, बोस्टन
श्री राधेश्याम सावित्री देवी हिसार
श्री मनसुख भाई तारावेन मेहता, राजकोट
श्रीमती एवं श्री ओमप्रकाश बंसल, मुक्सर
डॉ. एस. आर. कांकरिया, मुम्बई
श्री कमलसिंह-विमलसिंह बैद, लाडनूं
श्रीमती स्वराज एरन, सुनाम
श्रीमती चंपाबाई भंसाली, जोधपुर
श्रीमती कमलेश रानी गोयल, फरीदाबाद
श्री जगजोत प्रसाद जैन कागजी, दिल्ली
डॉ. एस.पी. जैन अलका जैन, नोएडा
श्री राजकुमार कांतारानी गर्ग, अहमदगढ़
श्री प्रेम चंद जिया लाल जैन, उत्तमनगर
श्री देवराज सरोजबाला, हिसार
श्री राजेन्द्र कुमार केडिया, हिसार
श्री धर्मचन्द रवीन्द्र जैन, फतेहाबाद
श्री रमेश उषा जैन, नोएडा
श्री दयाचंद शशि जैन, नोएडा
श्री प्रेमचन्द रामनिवास जैन, मुआने वाले
श्री संपतराय दसानी, कोलकाता
लाला लाजपत राय, जिन्दल, संगरूर
श्री आदीश कुमार जी जैन, दिल्ली
मास्टर श्री बैजनाथ हरीप्रकाश जैन, हिसार
श्री केवल कृष्ण बंसल, पंचकूला
श्री सुरनेश कुमार सिंगला, सुनाम, पंजाब
श्री बुधमल राजकरण, तेजकरण सिंघी, सरदार शहर

आर्ष-वाणी

जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृत्यस्य च,
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शीचितुमर्हसि।

-शास्त्र-वाक्य

जिसने जन्म लिया है उसकी मृत्यु निश्चित है और मृत्यु के पश्चात् पुनर्जन्म भी निश्चित है। अतः अपने अपरिहार्य कतर्व्यपालन में तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए।

बोध-कथा

संकल्प की शक्ति

लंदन की एक बस्ती में एक अनाथ बालक रहता था। वह अखबार बेचकर किसी तरह अपना गुजारा करता था। जब यह काम उसके हाथ से निकल गया, तो उसे एक जिल्दसाज की दुकान पर जिल्द चढ़ाने का काम मिल गया। उसे पढ़ने का बहुत शौक था। वह पुस्तकों पर जिल्द चढ़ाते समय उनकी महत्वपूर्ण बातों व जानकारियों को ध्यान से पढ़ता रहता था। एक दिन जिल्द चढ़ाते समय उसकी नजर विद्युत संबंधी एक लेख पर पड़ी। वह लेख उसे बहुत ही मनोरंजक लगा। वह उससे बहुत प्रभावित हुआ। उसने दुकान के मालिक से पुस्तक मांग ली और रात भर में उस लेख के साथ ही पूरी पुस्तक भी पढ़ डाली। इससे विद्युत संबंधी प्रयोग करने में उसकी जिज्ञासा बढ़ती गई और धीरे-धीरे वह प्रयोग एवं परीक्षण के लिए विद्युत संबंधी छोटी-मोटी चीजें जुटाने भी लगा। लोग उसकी प्रतिभा के कायल होते जा रहे थे। एक ग्राहक तो उससे बहुत ही प्रभावित हुआ। उसने तय कर लिया कि वह बालक को आगे बढ़ने में हरसंभव मदद करेगा। वह एक दिन उसे अपने साथ भौतिकशास्त्र के प्रसिद्ध विद्वान डेवी का भाषण सुनवाने ले गया। बालक ने डेवी की बातें ध्यान से सुनीं, उन्हें नोट किया और बाद में उनकी समीक्षा करते हुए अपने परामर्श लिखकर डेवी के पास भेज दिए। डेवी को बालक के सुझाव बहुत पसंद आए। उन्होंने उसे यंत्रों को व्यवस्थित करने के लिए रख लिया। बालक उनके सहयोगी और नौकर दोनों की भूमिका निभाता रहा। वह दिन भर अपने कामों में व्यस्त रहता, रात को अध्ययन करता। थकान होने पर भी उसके चेहरे पर शिकन तक नहीं आती थी। वह भौतिकी के क्षेत्र में कुछ असाधारण करने का संकल्प ले चुका था। वह दिन-रात अध्ययन और शोध में लगा रहता था। वह बाधाओं की तनिक भी परवाह नहीं करता था। यह बालक आगे चलकर माइकल फैराडे के नाम से विश्वविख्यात हुआ।

शाश्वत स्वर

प्रसन्नता ही ईश्वर से जोड़ती है

साधारण मनुष्य को साधारण जिज्ञासा होती है 'कः पंथा'? अर्थात किस रास्ते पर चलूं? चारों ओर पंडितों की भीड़ है। उनमें से हर एक व्यक्ति अपने-अपने ढंग से भिन्न-भिन्न बातें करता है। कोई एक बात कहता है और कोई दूसरी। इस स्थिति में एक साधारण मनुष्य के लिए सही रास्ता ढूंढना कठिन हो जाता है। आखिर वह किस रास्ते पर चले और किस रास्ते को छोड़े? वह समझ नहीं पाता और ऐसा समझने की क्षमता उसे मिली भी नहीं है।

इस बारे में कुछ ऐसे विचार या दर्शन है, जिन्हें वास्तविकता के धरातल पर नहीं उतारा जा सकता है, पर उन्हें सुनना बड़ा अच्छा लगता है। इस संबंध में कहा गया है- 'लोकव्यामोह कारकः'। अर्थात ये लोग मनुष्यों के मान को भ्रमित कर देते हैं और इस तरह उनके मन में रोग की सृष्टि करते हैं। जिस दर्शन का व्यावहारिक प्रयोग होता है वही दर्शन ग्रहण करने योग्य है, बाकी नहीं। पर इनसे साधारण मनुष्य यह बात समझेंगे कैसे कि कौन सा दर्शन ग्रहण करने योग्य है? कौन सा नहीं यह बहुत बड़ी समस्या है।

इस प्रश्न के उत्तर में एक महान कवि ने कहा है कि जितने भी धर्मशास्त्र हैं, जितने भी धर्म हैं उनमें एक के साथ दूसरे का मेल नहीं है। सब मानते हैं कि उनमें भगवान का आदेश लिखा है। सबको यदि भगवान का आदेश मिला है तो उनमें इतना मतभेद क्यों है? कोई कहता है पश्चिम की ओर मुंह करके उपासना करनी चाहिए कोई कहता है पूर्व की तरफ मुंह करना चाहिए। एक साथ एक ही व्यक्ति पूर्व और पश्चिम दोनों दिशाओं में मुंह करके कैसे खड़ा रह सकता है? कोई कहता है कि निम्न जाति के लोगों को और नारी को साधना करने का अधिकार नहीं है और जो लोग आश्रयहीन हैं उन्हें भी साधना करने का कोई अधिकार नहीं है। कोई कहता हैं धर्म प्रकाश और हवा की तरह है अतः इस पर सबका अधिकार है। किसकी बात मानी जाए और किसकी नहीं?

इस जिज्ञासा का एक उत्तर यह है- 'धर्मस्य तत्वं निहितं गुहायाम्'। हर वस्तु का एक मूल तत्व है। जैसे एक छोटा सा बीज है, उससे एक विराट वट वृक्ष पैदा होता है। वट का मूल तत्व इस छोटे से बीज में निहित था। पर धर्म का मूल तत्व किस में निहित है? वह परमपुरुष में निहित है? अतएव धर्म क्या है और अधर्म क्या है- वह जानने के लिए परमपुरुष के पास जाकर उसके भाव को ग्रहण करके देखना होगा।

-प्रस्तुति : निर्मला पुगलिया

मार्क्स का संकल्प: महावीर का विकल्प

मार्क्स का जीवन परम कारूणिक है। मानव मात्र के पीड़ित जीवन को देखकर उसके अन्तःकरण में जो करूणा का विस्फोट हुआ वह एक सीमा तक बुद्ध की विश्व-करूणा की ही प्रतिकृति है। उसके कारण, निवारण और साधनों की खोज भी बुद्ध के चार आर्य सत्यों की तरह सीधी और सपाट है। बुद्ध ने जैसे आत्मा ईश्वर आदि से सम्बद्ध प्रश्नों को अव्याकृत कहकर हटा दिया था, कुछ वैसे ही मार्क्स भी धर्म को अफीम कहकर हटा देता है, क्योंकि जो धर्म का ज्ञात रूप है वह अंधविश्वास, भाग्यवाद एवं निष्क्रियता का समर्थक है तथा जो मूल धर्म है वह जन-सामान्य तक पहुंच ही नहीं पाया है। वैसी ही स्थिति बुद्ध की रही होगी जब उन्होंने इन प्रश्नों को ही हटाया क्योंकि वे जानते थे कि उनकी भूमिका तक लोक-दृष्टि पहुंच नहीं पाएगी और लोक-दृष्टि तक उतरकर उनके शब्द अपनी अर्थवत्ता खोकर नये अन्धविश्वासों, मनकी वासनाओं के स्रोत बनेंगे। इसी कारण जो बुद्ध इन प्रश्नों को ही नकारते हैं, उनका जीवन प्रतिबिम्बित करता है इन्हीं के उत्तर को और जो मार्क्स धर्म को अफीम कहता है उसका जीवन साकार करता है प्रेम और करूणा, विश्व-मैत्री एवं बलिदान की भावसत्ता और तदनुकूल आचार को। उसने शोषण, उसके कारण, कारणों को निवारित करने का लक्ष्य तथा उसके उपलब्धि के साधन निरूपित किए। लेकिन लोक-जीवन में उनसे शोषण-मुक्त समाज की अवतारणा न हो सकी।

मार्क्स दर्शन की बुनियादी भूल

मार्क्स के दर्शन में एक बुनियादी भूल रही है और वह है-मानव के संस्थागत रूप पर ऐकान्तिक बल तथा उसके मानवीय रूप का सम्पूर्णतः विस्मरण। उसने अपने विचार का आधार यह सूत्र बनाया कि समाज में शोषण का कारण वर्ग-भेदमय सामाजिक ढांचा है जिसे बदल डालने पर उसका अन्त हो जाएगा। उसका द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद इसी प्रतिपत्ति पर आधारित है कि मन जैसी कोई सत्ता नहीं है, बाहरी परिस्थितियों के मानव पर जैव-रासायनिक प्रभावों को ही मन की अभिधा दी जाती रही है। अतः जैसा बाहरी वातावरण होगा मन वैसा ही बन जाएगा। मानवीय मन की सारी प्रवृत्तियां बाहरी वातावरण को ही प्रति-बिम्बित करती हैं।

ऐमिल बर्न्स के शब्दों में ''पदार्थ प्राथमिक सत्ता है, मन उसके आधार पर विकसित। अतः आदमी का शारीरिक अस्तित्व उसके अपने जीवन और जीवन के तरीकों के पहले आता है। दूसरे शब्दों में सिद्धान्त से पहले व्यवहार आता है। संस्थाएं और विचार हर युग के वातावरण की उपज हैं। उनका स्वतन्त्र अस्तित्व और इतिहास नहीं है, उनके मूल में कोई विचार या मनोभाव नहीं बल्कि उत्पादन के भौतिक प्रयास के समानान्तर उनका विकास होता रहता है।''

इस अवधारणा ने मानवीय मन और उसके वातावरण को बदलने की स्वतंत्र क्षमता को एकदम अमान्य कर दिया। मानव और उसका मन वातावरण की, संस्थाओं की उपज है, उनको प्रतिबिम्बित मात्र करता है, अतः उन्हें बदलते ही समस्याओं का समाधान निकल जाएगा। मार्क्स भूल गया कि शोषण का जन्म पहले मन के धरातल पर अहंकार और स्वार्थ के रूप में होता है, तदनन्तर वह आचरण में उतरता है और सामूहिक आचरण संस्थाओं के रूप में प्रतिबिम्बित होता है। बाहरी ढांचों को बदलते रहने पर भी मन का धरातल अगर वही है तो हर ढांचा खोखला होगा जिसके छिद्रों से मन अपनी वासनाओं और कामनाओं की आपूर्ति करता रहेगा, शोषण और उत्पीड़न द्वारा। इसका सबसे बड़ा उदाहरण है स्टालिन या व्यक्तिवादी एकाधिपत्यवाद, जिसने सामाजिक सत्ता को अपनी पूजा का उपकरण बना डाला और मार्क्स के सामाजिक आदर्शों को अपने जीवन एवं शासन-काल में एकदम उलट दिया। इसी की निष्पत्ति था वह नौकरशाही वर्ग जो आर्थिक-राजनीतिक सत्ता पाकर उसका स्वयं स्वामी बन गया और शेष जनता का उत्पीड़क तथा शोषक भी जबकि उसे यह सब सौंपा गया था एक लोकसेवा के उपकरण-रूप में, एक न्यास या ट्रस्ट-रूप में।

दूसरी भूल

दूसरी भूल मार्क्स ने, विशेषतः उसके उत्तराधिकारियों ने, जो की वह साध्यसाधन-विवेक की विस्मृति थी। हिंसा नंगी सत्ता है और सत्ता ही वैषम्य की जनक है। मार्क्स ने रक्तपात एवं संहार की बात अपने पूरे वाडंमय में नहीं कही यद्यपि 'संग्राम' की चेतावनी पूंजीवादी व्यवस्था को सर्वत्र दी है। लेकिन उसके उत्तराधिकारियों ने रक्तक्रांतियों को साम्यमूलक समाज-क्रान्ति को आधार बनाया। पाशविक शक्ति से जो व्यवस्था प्रतिष्ठित होती है वह अपने आप में शोषणमयी होती है चाहे उसका रूप कुछ भी हो। जब आचारीय प्रतिमानों का समापन हो जाता है तब स्थिति और भी विषम हो जाती है। लेनिन ने कहा- ''राजनीति में कोई नैतिकता नहीं होती, अनिवार्य आवश्यकता ही एकमात्र प्रयोजनीय वस्तु होती है एक बदमाश मात्र बदमाश होने के कारण भी प्रयोजनीय हो सकता है।... हमें धोखाधड़ी, विश्वासघात,

कानून-भंग और झूठ बोलने आदि के लिए तत्पर रहना चाहिए। जिनसे हमारा मतैक्य नहीं है उनके प्रति हमारी शब्दावली ऐसी ही होनी चाहिए। जिससे जन-साधारण के मन में उनके प्रति घृणा, विरक्ति और अरूचि पैदा हो।...'' अतः साम्यवादी चिंतन में ही आत्मघाती तत्वों का प्रवेश हो गया। साम्य एक नैतिक अपेक्षा है, नैतिकता का नकार साम्य का भी मूलतः नकार है। पूंजीपति मजदूरों का शोषण करें या मजदूर सत्ता ग्रहण कर पूंजीपतियों का, वैषम्य और शोषण दोनों स्थितियों में रहता है। पूंजीवाद व्यक्ति-सत्ता पर टिका हो अथवा राजसत्ता पर, वह पूंजीवाद- ही रहता है। इसी कारण साम्यवादी क्रांन्तियों की निष्पत्ति राज्य पूंजीवाद-स्टेट कैपिटलिज्म में हुई। राज्य के मूल में भी व्यक्ति है अतः वह मूलतः उसी प्रकार की पूंजीवादी व्यवस्था रह गयी जैसी कि पहले थी। उसके साथ एकदलीय तानाशाही जुड़ने से मानवीय बुनियादी स्वतंत्रताओं का अपहरण भी हो गया। व्यक्ति की दासता और अधिक भयावह तथा असहनीय हो गयी। साम्यवाद की विकृतियों के बीच उसकी मूल वैचारिक आधार-भूमि में ही छिपे थे, जिनका प्रकट होना अपरिहार्य था।

महावीर की करुणा

महावीर की करुणा भी मानवमात्र की नहीं अपितु जीवमात्र की पीड़ा का सतत बोध कर उसके निवारणार्थ मार्ग खोज रही थी और वर्षों की तपःसाधना के बाद उसने कुछ मूलभूत सत्य निकालकर प्रस्तुत किए। महावीर का अपरिग्रह उनकी अहिंसा समग्र जीवन सत्ता के परम सत्य को साकार करते हैं। परिग्रह को उन्होंने हिंसा माना है और अपरिग्रह को अहिंसा की एकमात्र शर्त। परिग्रह को उन्होंने मूर्छा माना है और अपरिग्रह को जागरण का प्रतीक। परिग्रह को उन्होंने शोषण, उत्पीड़न, अत्याचार एवं वैषम्य के अलावा प्रमाद, लापरवाही, अज्ञान एवं आत्मविस्मृति का स्रोत भी अनुभव किया है। महावीर और मार्क्स की मूल दृष्टि में अन्तर यही है कि जहां मार्क्स को पूंजीवादी व्यक्ति घृणास्पद प्रतीत होता है, महावीर उसे करुणा का पात्र अनुभव करते हैं। क्योंकि वह वस्तु-केन्द्रित होकर अपनी आत्मसंज्ञा खो चुका है! जीवित शव की तरह आत्मचेतना-शून्य काल यापन कर रहा है! चिन्ता, क्रोध तनाव, वेदना के असंख्य शल्यों से अपने को निपीड़ित कर रहा है। किसी उन्मत कापालिक की तरह सर्वत्र घृणा तथा वैर का बन्ध कर रहा है। वह मूर्च्छित है, एक प्रकार का मानस-रोगी है जिसका सहानुभूतिपूर्वक उपचार अपेक्षित है और उसका एकमात्र मार्ग है उसकी चेतना का जागरण। परिग्रह का जन्म मन के घरातल पर जिस मूर्च्छा में होता है, वस्तु जगत के साथ चैतन्य का जो छलनामय तादात्म्य है उसी को तोड़ना आवश्यक है। भौतिक जगत का घटनाचक्र तो मानव-चेतना के अतल गहर में घूमने वाले भाव-चक्र की

प्रतिच्छाया मात्र है। अतः महावीर का मार्ग है मन की चिकित्सा, अन्तःरूपान्तरण, चेतना का जागरण। वहीं से वह मानसिक अणु-स्फोट हो सकता है जो व्यक्ति को भीतर-बाहर से बदल दे, उसके पारिवारिक-सामाजिक जीवन व्यवहार को परिवर्तित कर दे, शोषण एवं वैषम्य का उन्मूलन कर शोषणविहीन साम्य-मूलक समाज की रचना में जो निष्पन्न हो सके। इस दृष्टि से महावीर और मार्क्स की भूमिकाओं में एक बुनियादी अन्तर है। माकर्स जहां ऊपरी अभिव्यक्तियों को बदलने का निष्फल प्रयास करता रहा है वहां महावीर उसे ही बदलने की प्रेरणा देते हैं जिसके वे सब प्रतिबिम्ब मात्र हैं। महावीर हिंसा का ही प्रतिकार करते हैं और शोषण हिंसा का एक प्रकार है। वे लोभ को निवारित करने की प्रेरणा ही नहीं देते अपितु उसके कारण ओर निवारण के स्रोत भी निरूपित करते हैं। प्रमाद हिंसा का मूल है, लोभ या अहं या वासना तीनों इसके प्रतिबिम्ब मात्र हैं, मन के घरातल पर तथा शोषण और विषमता परिणतियां हैं उसकी। प्रमाद समाज का जितना शत्रु है उतना व्यक्ति का भी। अपितु व्यक्ति की सारी सत्ता को ही खा जाता है वह। अतः महावीर प्रमाद को ही हिंसा कहते हैं, कर्मबन्धन कहते हैं, मरण और नरक कहते हैं और उनका सारा विचार अप्रमाद पर केन्द्रित है। सम्पूर्ण व्यक्ति का रूपान्तरण उनका लक्ष्य है क्योंकि व्यक्ति ही बुनियादी इकाई है सारे सामाजिक-राष्ट्रीय संगठनों की। महावीर मार्क्स से अधिक मूलग्राही हैं। उनका मार्ग लम्बा हो सकता है लेकिन एकमात्र सही मार्ग वही है। छोटे मार्ग की खोज में बहुत प्रयास हो चुके- फ्रांस की राज्यक्रांति से लेकर संसार के आधे देशों में साम्यवादी क्रांति तक और उनकी निष्पत्तियां मानवता के लिए कल्याणकारी नहीं रही हैं। मार्क्स ने हिंसा का जो मार्ग बताया उसमें भी सामान्य आचारीय प्रतिमानों का नकार नहीं था। छल, फरेब, कृतघ्नता और विश्वासघात के लिए उसमें स्थान नहीं था। वह हिंसा मात्र प्रतिक्रिया थी, मात्र विद्रोह थी। लेकिन उसके उत्तराधिकारियों ने सारे प्रतिमानों को ही नकार दिया। महावीर शोषण को हिंसा मानते हैं, हिंसा को एक प्रकार का शोषण ही मानते हैं। अतः शोषण से शोषण का विनाश सम्भव नहीं है, यह उनकी स्पष्ट मान्यता है। महावीर शोषण को अनाचार मानते हैं तथा अनाचार मूलतः शोषण ही है, यह भी जानते हैं, अतः उनका मन्तव्य है कि अनाचार के एक प्रकार से उसके दूसरे प्रकार का उन्मूलन सम्भव ही नहीं है।

शोषण का अस्वीकार

महावीर ने वैषम्य और शोषण के प्रतिकार का मार्ग बताया वह सम्पूर्णतः अहिंसक है। उसमें मानवीय चेतना की तेजस्विता है, सामाजिक चेतना की समवेत शक्ति है, संगठन का बल है। असहकार और अवज्ञा के जिन अहिंसक शस्त्रों का गांधी जी ने भारत के स्वातन्त्र्य-संग्राम में प्रयोग किया वे महावीर के द्वारा सर्वप्रथम तीन करण और तीन योग

के रूप में निरूपित किये जा चुके हैं। महावीर के मार्ग का अनुसरण करने वाला व्यक्ति अपने में एक विस्फोटित परमाणु की तरह अपार शक्ति का साकार पुंज है जो सारे समाज मे क्रान्तियों की एक श्रृंखला प्रसारित करने में समर्थ हैं जैसे एक टूटा परमाणु शेष सारे परमाणुओं में श्रृंखला बद्ध प्रतिक्रिया (चेन रीएक्शन) पैदा कर अपार शक्ति का स्फोट कर देता है। असहकार एवं अवज्ञा की शक्ति का जागरण अगर देश के सारे श्रमिकों में हो तो पूंजीपति उनका शोषण एक क्षण भी नहीं कर सकते, शोषण इसलिए होता है कि वे उसके प्रति भीतर से असहमत नहीं हैं। इसका कारण यह है कि इसमें से प्रत्येक शोषित दूसरों के लिए स्वयं शोषण बन जाता है, इस कारण शोषक की सत्ता का समापन नहीं कर पाता। अगर शोषण का भीतर से उन्मूलन हो तो एक छोटा-सा समुदाय भी समाज को बदल सकता है। मूल समस्या संख्या की नहीं, शुद्धि की है। जिस देश का हर व्यक्ति दूसरे से पहले अपना काम अन्यायपूर्वक भी करवा लेना चाहता है उससे भ्रष्टाचार कैसे विदा होगा? जिस समाज का हर व्यक्ति अपने से कमजोर को दबाकर आगे बढ़ जाना चाहता है उस समाज में शोषणविहीन समत्व की प्रतिष्ठा कैसे हो सकती है? मूल समस्या यह नहीं है कि शोषण है बल्कि यह है कि हमने उसे स्वीकार कर रखा है, प्रतिष्ठा दे रखी हैं। हर व्यक्ति अपने लिए शोषण का नकार करता है, दूसरों के लिए स्वीकार करता है। इस स्थिति में कितनी ही रक्त-क्रान्तियां क्यों न हों, शोषणविहीन समाज-संरचना एक असम्भव प्रकल्पना मात्र रहेगी। जन-जन की चेतना का रूपान्तरण हो, शोषण के प्रति सब व्यापक सन्दर्भों में नकार का स्वर उठाएं तो असहकार एवं अवज्ञा की शक्ति द्वारा समाज के सामने एक ऐसी क्रांतिकारी स्थिति प्रस्तुत की जा सकती है। जिसमें बदलने या मिटने के अलावा उसके सामने कोई विकल्प ही नहीं रहे। जो संगठित लोक-शक्ति अवज्ञा और असहकार से एक विराट् साम्राज्य को ध्वस्त कर सकती है वह सारी मानवता के पुनर्नवीकरण में भी सक्षम है, लेकिन अहिंसा का अधिष्ठान समत्व है, अपने और दूसरों के मध्य मन के धरातल पर। अगर हमारे भीतर दूसरों से स्वयं को विशिष्ट समझने तथा उनके अहित की कीमत पर अपना हित-साधन करने की मूल प्रवृत्ति कायम है तो हम किसी भी क्रांति द्वारा, चाहे वह हिंसक हो या अहिंसक, समाज से शोषण का अन्त नहीं कर सकते। महावीर का मार्ग शुद्धि का है- धम्मो सुद्धस्स चिट्ठई।

अगर महावीर के जीवन्त सत्यों का लोक-जीवन के धरातल पर सम्यक् अवतरण होता तो लोकतन्त्र का रूप बदल जाता, समाज की आर्थिक-सामाजिक व्यवस्थाएं ही बदल जाती, परिवार और व्यक्ति के अन्तःसम्बन्ध ही बदल जाते तथा समग्र मनवता का अन्तःरूपान्तरण हो जाता है।

अध्यात्म-साधना क्यों?

○ संघ प्रवर्तिनी साध्वी मंजुलाश्री

साधना जीवन का अनिवार्य पक्ष है। व्यक्ति जिस कार्यक्षेत्र में उतरता है तद् विषयक योग्यता साधनारत होकर ही पाता है। एक सैनिक युद्ध-कला में निष्णात बनने के लिए कितनी साधना करता है, यह हर सैनिक शिक्षण शिविर में देखा जा सकता है। अर्जुन का बाण-कौशल उसकी चिरकालीन साधना का ही परिणाम था। एक शिल्पकार अपने शिल्प के प्रति कितना समर्पित रहता है, यह हर कला-मर्मज्ञ के जीवन से स्पष्ट है। किसान का बालक हल चलाने से लेकर अनाज पाने तक की प्रविधि साधनारत होकर ही सीखता है।

आज के वैज्ञानिकों को भी अपनी नई उपलब्धियों को प्रस्तुत करने के लिए कितनी अनवरत साधना करनी पड़ती है, यह चन्द्रलोक के लिए छोड़े जाने वाले रॉकेटों के प्रत्यावर्तनों में स्पष्ट है।

जब प्रत्येक भौतिक सिद्धि व बाह्य उपलब्धि साधना-सापेक्ष है, फिर अन्तर की उपलब्धि के लिए साधना की अनिवार्यता में सन्देह ही कैसा?

आज अन्तर की रिक्तता ने व्यक्ति-चेतना और समूह-चेतना को विक्षिप्त बना दिया है।

मैंने देखा, एक शिक्षा-सम्पन्न व्यक्ति को, जो बी.एस.सी. था और पी.एच.डी. करने के लिए उत्सुक दिख रहा था। वह ऊपर से जितना सभ्य और शालीन प्रतीत हो रहा था, भीतर में उतना ही विक्षिप्त था। विक्षिप्तता की मात्रा कभी-कभी इसनी तीव्र हो जाती कि तत्काल उसे पागल चिकित्सालय में भेजा जाता। वहां इलेक्ट्रिक शॉक दिए जाते और मनोविश्लेषण द्वारा उसका ग्रन्थिमोचन किया जाता है।

मैंने सुना- एक अर्थ-सम्पन्न व्यक्ति के बारे में, जो नौ मिलों का मालिक था, भरे-पूरे परिवार में रहता था, फिर भी अन्यमनस्क और खोया-खोया-सा था। उसके किसी अन्तरंग व्यक्ति ने बताया- रात को नींद की गोलियां खाकर यह मुश्किल से सो पाता है और नींद में भी मिल-कर्मचारियों को धमकी देता हुआ या उत्पादन-वृद्धि के बारे में अनर्गल बोलता हुआ पाया जाता है। आज मिल-मालिक बनने के बाद जितना उद्विग्न रहता है, पहले ऐसा नहीं था।

मैंने पढ़ा-एक सम्राट की आत्महत्या के विषय में। वह न शत्रुओं से आक्रान्त था, न सेना, कोष और अंत:पुर के विषय में व्यथित था। फिर भी जीवन से ऊब कर उसने आत्महत्या कर ली।

एक समाचार पत्र के मुखपृष्ठ पर अमेरिकन फिल्म अभिनेत्री का सबिम्ब विवरण छपा था, जिसमें उसकी दु:खद आत्महत्या का सजीव चित्रण था। वह एक सफल अभिनेत्री थी। हजारों-हजारों युवक उस पर झूमते थे और दसों व्यक्तियों ने उसके पीछे प्राण तक दे दिए फिर भी उसके असंतोष ने उसे आत्महत्या के लिए विवश कर दिया।

जीवन के चौराहे पर घटने वाली ऐसी अवांछनीय घटनाओं से स्पष्ट है कि बौद्धिक शिक्षा, अर्थसत्ता और प्रेम ही मनुष्य का समाधान नहीं है। हर व्यक्ति को एक अखण्ड और सहज आनन्द चाहिए, जो बाहर से नहीं, अपने भीतर से उपलब्ध होता है। अन्तर की उपलब्धि हो जाने पर सर्वत्र आनन्द ही आनन्द प्रतीत होता है।

जो व्यक्ति अपने बौद्धिक विकास को विवेक, अनुभव और संवेदनशीलता से भावित नहीं करता, उसके लिए बौद्धिक विकास समस्या या भार बन जाता है.।

जो व्यक्ति अपनी अर्थ-लिप्सा को आत्मतोष, अनासक्ति और विसर्जन भावना से संतुलित नहीं करता उसके लिए अर्थ अभिशाप बन जाता है।

जो व्यक्ति अपने विस्तार की भावना या महत्त्वाकांक्षा को अहं-विसर्जन, सेवाभावना और आत्मौपम्य से नियंत्रित नहीं करता, उसके लिए सत्ता एक दुर्घटना बन जाती है।

जो व्यक्ति शरीरनिष्ठ और संकीर्ण प्रेम (जिसका परिणाम है अतृप्ति, घृणा और आत्मग्लानि) को आत्मनिष्ठ होकर व्यापक नहीं बनाता, उसके लिए प्रेम एक गम्भीर खतरा बन जाता है।

विद्या, अर्थ, सत्ता और प्रेम की उपलब्धि होने पर भी व्यक्ति को शांति, सरसता, सहजता और स्वतंत्रता का तब तक अनुभव नहीं होता जब तक जीवन में आत्मानुशासन, मैत्री, निर्ममत्व और निरहंकार का पर्याप्त विकास नहीं हो जाता।

आज के वैज्ञानिकों ने भी इस तथ्य को स्वीकार किया है कि बाह्य भोगों से आंतरिक और स्थायी तृप्ति नहीं मिल सकती। डॉ. फ्रैंक्ल का अभिमत है कि 'भोगों और शक्ति-संचय से व्यक्ति को स्थायी तृप्ति और मानसिक स्थिरता नहीं मिल सकती। उसके लिए यह जरूरी है कि व्यक्ति अपने जीवन के लक्ष्यों से परिचित हो और उनकी सिद्धि के लिए कार्य करे।'

सुख-दु:ख का कारण बाहरी सामग्री का भाव और अभाव हो सकता है किन्तु उससे भी आगे सुख-दु:ख की सर्जक व्यक्ति की अपनी वृत्तियां हैं। उन (वृत्तियों) के संशोधन के

लिए शरीर और मन को साधना अत्यन्त आवश्यक है। शरीर और मन का स्वस्थ संचालन अध्यात्मनिष्ठ व्यक्ति ही कर सकता है। अध्यात्म-साधना क्यों? इस प्रश्न का बस यही समाधान है।

इस प्रश्न के पारिपार्श्विक कुछ प्रश्न और हैं। वे प्रश्न हैं-

1. अध्यात्म-साधना क्या है?
2. उसे कौन करे?
3. कब करे?
4. कब तक करे?
5. कहां करे?
6. कैसे करे?
7. उसकी निष्पत्ति क्या है?

ये सभी प्रश्न एक गंभीर, स्थायी और व्यावहारिक समाधान चाहते हैं।

अध्यात्म का अर्थ है दृष्टि की अंतर्मुखता और अंत:करण की पवित्रता। इसका तात्पर्य है व्यक्ति की जो शक्तियां-मूर्च्छा, आकांक्षा, प्रतिशोध, अहंपोषण, संघर्ष, कुंठा और मानसिक द्वन्द्व में लगी रहती हैं उन्हें निर्ममत्व, अनासक्ति, मैत्री-प्रसाधन, समताभाव, सहिष्णुता, सहानुभूति, समन्वय और संतुलन के विकास में लगना।

बहिर्मुखता से केवल आत्म-हनन ही नहीं, व्यवहार-हनन भी होता है। अन्तर्मुखता आंतरिक लाभ के साथ व्यवहारों में भी मृदुता और सरसता उत्पन्न करती है।

आत्मा के विकारों का शोधन कर स्वस्थ बनने की प्रक्रिया भी अध्यात्म का एक प्रारूप है। निष्कर्ष की भाषा में व्यक्ति की वह प्रत्येक संयत और सहज क्रिया अध्यात्म है जो उसे बाह्य से मोड़कर आत्मस्थ बनाती है।

जो व्यक्ति केवल ध्यान, मौन, आसन, प्राणायाम, हठयोग, ईश्वर-उपासना और तप-विशेष को ही अध्यात्म-साधना मानते हैं, वे केन्द्र को छोड़कर परिधि में घूम रहे हैं।

अध्यात्म सर्वथा अप्रतिवद्ध है। साधनाशील व्यक्ति क्या करता है उसका जितना महत्त्व नहीं, उससे अधिक महत्त्व इसका है कि वह जो कुछ भी करता है, कैसे करता है?

भगवान महावीर ने निर्घृण भाव से रुग्ण की परिचर्या करने वालों को एक घोर तपस्वी और उग्रध्यानी के समकक्ष ही साधनाशील माना है। इतना ही नहीं, समभावपूर्वक आहार करने वाले को भी तपस्वी से कम नहीं माना।

भगवान की साधना का पहला सूत्र है- 'अक्षोभ'। उत्सुकता और उद्वेग मन को विक्षिप्त

बना देते हैं। करणीय के प्रति सहज प्रवृत्ति होने पर वह ज्ञाता हो जाता है। साधना का दूसरा सूत्र है- 'तच्चित्तता'। इसका अर्थ है क्रियमाण कार्य के प्रति सहज समर्पण। इसे भाव क्रिया कहा जाता है।

साधना का तीसरा सूत्र है- मोक्ष की जिज्ञासा। आचार्य हरिभद्र सूरि ने लिखा है- 'मोक्खेण जोयणाओ जोगो सब्वो वि धम्म वावारो'। वे समस्त क्रियाएं योग या साधना हैं जो व्यक्ति को बन्धन से मुक्ति की ओर ले जाती हैं।

बहुत से माध्यमों में उलझकर मूल से बंचित रह जाते हैं। ध्यान, प्राणायाम, आसन आदि सहजता को पाने के माध्यम हो सकते हैं, पर साध्य नहीं। इसलिए हमारे तत्त्ववेत्ताओं ने कहा है-

'उत्तमा सहजा वृत्तिः, मध्यमा ध्यान धारणा
अधमा शास्त्रजा वृत्तिः, तीर्थयात्राऽधमाऽवधमा।'

जीवन की सहजता और स्वस्थता के समक्ष उपासना के समग्र नगण्य हैं।

<u>अध्यात्म-साधना कौन करे?</u>

यह विचार नितान्त अवांछनीय है कि अध्यात्म-साधना वे करें जिन्हें नरक का भय और स्वर्ग का प्रलोभन है, संसार से घृणा और संन्यास के प्रति अनुराग है या फिर वे करें जो समाज की दायित्वपूर्ण जीवन-पद्धति से पलायन कर अरण्य का अकर्मण्य जीवन बिताना चाहते हैं।

सचाई यह है कि भय, प्रलोभन, घृणा, अनुराग, पलायन और अकर्मण्यता अध्यात्म-साधना के भयंकर विघ्न हैं। जीवनगत दुर्बलताओं के परिपार्श्व में अध्यात्म -साधना की फलान्विति वैसे ही असंभाव्य है जैसे पत्थर पर कमलों की खेती।

अध्यात्म-साधना के वे अधिकारी हैं जो आम-पवित्रता और जीवन की स्वस्थता चाहते हैं, समाज में रहकर भी परिस्थिति के वात्याचक्र से अप्रभावित रहना चाहते हैं और संघर्षमय वातावरण में भी शांति, सौहार्द व सरसतापूर्ण जीवन जीना चाहते हैं।

समाज के दायित्वशील व्यक्ति व कार्यकर्त्ताओं के लिए अध्यात्म-साधना की और भी अधिक उपयोगिता है क्योंकि कोई भी व्यक्ति स्वयं सधकर ही समाज का हित कर सकता है।

व्यक्ति अप्रामाणिक क्यों बनता है? शोषण और भ्रष्टाचार क्यों करता है? विश्वासघात और नृशंस व्यवहार क्यों करता है? इन सबके पीछे जितनी स्थिति की बाध्यता नहीं उतनी व्यक्ति की आन्तरिक दुर्बलताओं की बाध्यता है।

व्यक्ति का अपना आत्म-असंयम, मानसिक असंतोष, स्वार्थों की प्रबलता, प्रलोभन और बहकाव की स्थितियां, विचारों की कुंठा, हीन भावना-जनित उत्तेजना और अनास्थाशील

मानस- ये ही सब वस्तुतः दुष्प्रवृत्तियों के मुख्य कारण है।

जीवन-व्यापी दुष्प्रवृत्तियों का समाधान साधना के बिना सर्वत्र असंभव है। साधनारत जीवन में मूलतः ऐसी वृत्तियां पनपती ही नहीं हैं और जो पनपी हुई होती हैं वे भी स्वयं निरस्त हो जाती हैं। बस इसी दृष्टि से साधना उनके लिए आदरणीय है जो आनन्द का जीवन जीवना चाहते हैं और उनके लिए विशेष रूप से आवश्यक है जो समाज के दायित्व का वहन करते हैं।

साधना में देश, काल और स्थिति की प्रतिबद्धता नहीं होती। अंतिम अवस्था ही साधना का उचित काल है। निर्जन अरण्य ही साधना के लिए उचित क्षेत्र है। ऐसा प्रतिबद्धतापूर्ण चिन्तन सत्य का आत्म-हनन है। देश, काल, अवस्था और परिस्थिति का बहाना व्यक्ति की अपनी आन्तरिक दुर्बलता का सूचक है।

साधना के क्षेत्र में छोटे-बड़े, ऊंच-नीच, धनी-निर्धन का सीमा-निर्धारण भी नहीं है और न देश, जाति, धर्म और सम्प्रदायगत विभिन्नता ही उसमें साधक-बाधक बनती है।

एक विकल्प अवश्य है कि साधना के प्रारम्भकाल में कुछ वातावरण की अपेक्षा होती है और उसी वातावरण की अनुकूलता के लिए प्रारम्भ में व्यक्ति उचित क्षेत्र और उचित समय का चुनाव करता है। साधना का प्रारम्भिक रूप सध जाने के बाद व्यक्ति जिस किसी कार्यक्षेत्र में उतरता है उसकी साधना वहां स्वतः स्फूर्त हो जाती है।

साधनाशील व्यक्ति निष्कर्म होता है, यह मिथ्या धारणा है। वस्तुतः सक्रियता साधना से ही निष्पन्न होती है। कार्यक्षेत्र साधना की कसौटी है और सच तो यह है कि साधना-क्षेत्र और कार्यक्षेत्र भिन्न होते ही नहीं। साधना को परखने का अवकाश कर्मक्षेत्र में ही होता है।

-क्रमशः

पत्थर भी ठीक स्थान पर हो तो भगवान बन जाता है,
छोटी-सी बात से दो दिलों में व्यवधान बन जाता है,
छोटा होने से मोल कम नहीं, भटके राही के लिए,
उड़ता हुआ कौआ भी गांव की पहचान बन जाता है।

-आचार्यश्री रूपचन्द्र

कहानी

कुशल मोची

○ साध्वी मंजुश्री

विजय नगर के राजा विक्रम सिंह बहुत ही बहादुर परोपकारी दयालु और न्याय प्रिय राजा थे। उनके दरबार में जो भी मुराद लेकर आता वे उसे पूरा करते थे। एक दिन एक मोची बहुत सुंदर कलात्मक जूते बनाकर राजा के दरबार में लाया। जूते देखते ही राजा को पसंद आ गए। राजा ने मोची की कला से प्रभावित हो खजांची को आदेश दिया कि कारीगर को सौ सोने के सिक्के दे दिये जाएं। राजा की आज्ञा को शिरोधार्य कर खजांची ने सौ सोने के सिक्के दे दिए। मोची को इतनी बड़ी रक्म मिलने की आशा नहीं थी। उसने राजा के खूब गुणगान किएं। बार-बार सर झुकाकर प्रणाम करते चलता बना।

उसके जाने के बाद महामंत्री ने कहा राजन्! ये आप ने क्या किया! इन जूतों की कीमत एक सिक्के से ज्यादा नहीं है। अगर ऐसे आप कीमत देने लगे तो राजकोष शीघ्र ही खाली हो जायेगा जब प्रजा को मालूम होगा कि आपने साधारण सी एक जोड़ी जूती की इतनी बड़ी कीमत दी है तो फिर हर कोई हर काम के लिए इतनी बड़ी रक्म की आशा करेगा। अतः आपको यह निर्णय बदलना चाहिए।

राजा ने कहा-मंत्रीवर! अब क्या हो सकता है? चालाक मंत्री ने कहा-महाराज यह काम तो बहुत सरल है आप मोची को बुलवाऐं और पूछें कि ये जूते गर्म है या ठंडे अगर वह कहे कि गरम है तो आप फरमाएं कि मैंने तो ठंडे जानकर इतनी बड़ी रकम दी थी। और यदि ठंडे कहे तो आप फरमायें कि मैंने तो गरम जानकर इतनी बड़ी रकम दी थी उसे दोनों स्थितियों में ही वापस करनी पड़ेगी। मोची को वापस बुलाया गया।

राजा ने उससे पूछा-तुम्हारे जूते गर्म हैं या ठंडे। मोची ने हाथ जोड़ते हुए कहा-मालिक ये जूते मैंने पहली बार विशेष रूप से आपके लिए ही बनाए है। इसलिए मैं इसके गर्म या ठंडे होने के बारे में बिल्कुल अनभिज्ञ हूं। मोची का जवाब सुनकर मंत्री का मुंह लटक गया।

लेकिन राजा उसके उत्तर से प्रसन्न हुआ और उन्होंने खजांची से कह कर सौ सिक्के और दिलवा दिये। कारीगर ने ईनाम लेकर राजा को खूब दूआएं दी और जाने लगा। जब वह जा रहा था तो उसके थैले से एक सिक्का नीचे बालू रेत में गिरकर दब गया और वह उसे खोजने लगा। मंत्री को फिर अवसर मिल गया और उसने राजा को भड़काते हुए कहा-देखिए राजन्! यह कितना लालची है इतने सिक्के मिलने पर भी एक सिक्के को खोज रहा है। इस प्रकार आपके सामने सिक्का खोजना अशोभनीय है। अतः यह उदारता का पात्र नहीं है।

राजा ने इस बार क्रोधित होकर उसको फटकारते हुए कहा-तुम इतने लालची हो। इतना ईनाम मिलने पर भी तुम्हें सब्र नहीं आया जो एक सिक्का भी नहीं छोड़ सकते। इसी बीच मोची को गिरा हुआ सिक्का मिल चुका था। उसने बड़ी ही विनम्रता से झुककर प्रणाम किया और बोला-मालिक! आपके अलावा इतना बड़ा इनाम मुझे और कौन दे सकता है लेकिन स्वामी मैं गिरा हुआ सिक्का वहीं छोड़कर अपमान कैसे कर सकता था। देखिये इस सिक्के पर आपका चित्र है यदि वहीं पड़ा रहता तो कितने लोगों के पैर इस पर पड़ते। मेरा उद्धार करने वालों का ऐसा अपमान मैं कैसे बर्दाश्त कर सकता था। इसलिए मैं यह सिक्का वहां खोज रहा था।

मोची की विनम्रता और बुद्धिमत्ता से राजा और अधिक प्रभावित हो गये और उन्होंने उसे हजार सिक्के और देकर विदा कर दिया। मंत्री जलकर रह गया।

कविता

-आचार्यश्री रूपचन्द्र

उतना ही आकाश मिलेगा जितना बड़ा हमारा आंगन
उतनी सांस मिलेगी केवल जितना खुला हुआ वातायन।

छोटी मोटी गगरी जैसी उतना ही आएगा पानी
टूट पड़े यह आसमान बरसे चाहे उतना घन सावन।

सतरंगी खुशबू में लिपट महक रहे हैं गुलशन-गुलशन
उतने फूल मिलेंगे हमको जितना बड़ा हमारा दामन।

कोई काम नहीं आती है दूर-दूर फैली यह धरती
सुख से सोये वही कि जिनको दो गज का मिल गया बिछावन।

दर्ज हो गया क्षण बेचारा कोलाहल के ही खाते में
हो न सका है इसीलिए बस जीवन-गीता का पारायण।

खुद को अगर परखना हो तो शर्त नहीं मंदिर-मस्जिद की
केवल शर्त यही है चेहरों से खाली हो मन का दर्पण।

ब्रह्मचारी भीष्म

यह कहना कठिन है कि भीष्म पहले वीर थे या पहले ब्रह्मचारी। वह अपने समय के सबसे बडे योद्धा भी थे और सबसे आदर्श ब्रह्मचारी भी। ब्रह्मचर्य के पालन में तो शायद चारों युगों में उनकी बराबरी का कोई उत्पन्न नहीं हुआ। उनका अखंड ब्रह्मचर्य ही शायद उनकी अद्वितीय वीरता का कारण था क्योंकि ब्रह्मचर्य और वीरता का अटूट संबंध है। भीष्म आजन्म ब्रह्मचारी रहे, इसी कारण उन्होंने मृत्यु को भी अपने वश में कर लिया।

उनका असली नाम देवव्रत था, लेकिन एक कठिन प्रतिज्ञा के कारण उनका नाम 'भीष्म' पड गया जिसका संबंध उनके पिता शांतनु से है।

जब भीष्म कुमार अवस्था को पार करके यौवन में कदम रख रहे थे और वह युवराज बनने ही वाले थे कि एक दिन उनके पिता शांतनु यमुना-तट पर विहार करने के लिए निकले। वहां सहसा उन्होंने निषादराज केवट की पुत्री सत्यवती को देखा तो वह उस पर मोहित हुए बिना न रह सके। उन्होंने उसे अपनी पत्नी बनाना चाहा। सत्यवती निषादराज की कन्या नहीं थी। उसका मात्र पालन-पोषण उनके यहां हुआ था। राजा शांतनु ने जब निषादराज से उनकी कन्या मांगी, तब उन्होंने कहा- 'मैं अपनी कन्या आपको तभी दे सकता हूं, जब आप यह प्रतिज्ञा करें कि आपके पीछे इस कन्या के गर्भ से उत्पन्न पुत्र ही राज्य का अधिकारी होगा?'

यद्यपि महाराज शांतनु सत्यवती पर आसक्त हो गए थे, परंतु अपने विनयी, सुशील तथा योग्य पुत्र देवव्रत को उसके अधिकार से वंचित करना उन्होंने स्वीकार नहीं किया और वापस लौट आए।

महाराज शांतनु लौट तो आए पर उनका चित्त सत्यवती में ही लगा रहा। चिंता से वह दुर्बल पड़ने लगे। देवव्रत ने मंत्रियों तथा सेवकों से पूछकर किसी प्रकार पिता की चिंता का कारण जान लिया। वह बड़े-बूढ़े क्षत्रियों को लेकर निषादराज के यहां गए और उनकी कन्या को अपने पिता के लिए मांगा।

निषादराज ने कहा- ' यह कन्या मेरी नहीं है, आप जैसे ही उच्च राजकुल में उत्पन्न हुई है। इसके पिता ने मेरे यहां इसे पालन-पोषण के लिए रखा है और वह तप करने चले गए हैं। उनकी भी इच्छा यही है कि इसका विवाह आपके पिता से हो, किंतु इस संबंध में यह दोष है कि इसके पुत्रों की आपसे प्रतिद्वंद्विता हो जाएगी और आपसे शत्रुता करके तो देवता भी जीवित नहीं रह सकते।'

देवव्रत ने कहा- 'निषादराज! मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि इसके गर्भ में उत्पन्न पुत्र ही हमारा राजा होगा।'

इस उत्तर से निषादराज को संतोष नहीं हुआ। उन्होंने कहा- 'राजकुमार! आपकी प्रतिज्ञा तो आप जैसे उत्तम पुरुष के ही योग्य है, किंतु मुझे भय है कि आपका पुत्र सत्यवती के पुत्र से राज्य छीन लेगा।'

देवव्रत ने कुछ सोचकर हाथ उठाकर कहा- 'मैंने अपने पिता के लिए राज्य का त्याग तो पहले ही कर दिया था, अब दूसरी प्रतिज्ञा करता हूं कि आज से आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करूंगा।' इस प्रतिज्ञा के करते ही आकाश से पुष्पों की वर्षा होने लगी। देवताओं ने इतनी भीषण प्रतिज्ञा करने के कारण देवव्रत का नाम 'भीष्म' रखा।

जब निषादराज की कन्या लाकर भीष्म ने अपने पिता को दी, तब शांतनु ने उन्हें आशीर्वाद देते हुए कहा- 'मेरा निष्पाप पुत्र जब तक जीना चाहेगा, तब तक मृत्यु उसका स्पर्श नहीं कर सकेगी। जब मेरा पुत्र इच्छा करेगा, तभी मृत्यु उसे छू सकेगी।'

यह तो हुई भीष्म की प्रतिज्ञा की भूमिका मात्र। इससे पहले उन्होंने आचार्य-कुल में रहकर पचीस वर्ष की आयु तक बह्मचर्य का पालन किया था। अब उन्होंने जीवन-भर ब्रह्मचारी रहने का संकल्प कर लिया ओर आजीवन उसे पूरी तरह निभाया। यह प्रतिज्ञा बहुत कठिन थी और संस्कृत में भीष्म का अर्थ भी कठिन होता है इसलिए इस प्रतिज्ञा-पालन के कारण ही बालक देवव्रत का नाम भीष्म पड़ गया। वह कौरवों और पांडवों के कुल में विद्या, आयु और तप में सबसे बड़े थे इसलिए वह 'पितामह' कहलाए। आज भी लोग उन्हें भीष्म पितामह के नाम से याद करते हैं।

भीष्म की वीरता के दो मुख्य स्थल रहे। अपने गुरु परशुराम के साथ युद्ध की बात कुछ आश्चर्यजनक प्रतीत होती है। किंतु इसकी कहानी इससे भी अधिक आश्चर्यजनक है। बात यों हुई कि भीष्म की विमाता से महाराज शांतनु के दो पुत्र हुए- चित्रांगद और विचित्रवीर्य। शांतनु की मृत्यु पर चित्रांगद भी एक युद्ध में मारे गए। अब विचित्रवीर्य हस्तिनापुर के सिंहासन पर बैठे। विचित्रवीर्य की आयु उस समय बहुत छोटी थी। इस कारण उनके बालिग होने तक राज-काज भीष्म को ही संभालना पड़ा।

जब विचित्रवीर्य विवाह-योग्य हुए तो भीष्म को उनके विवाह की चिंता हुई। काशिराज की कन्याओं का स्वयंवर होने वाला है, यह जानकर भीष्म बड़े खुश हुए और काशी रवाना हो गए।

स्वयंवर-भवन में देश-विदेश के राजा और राजकुमार आए हुए थे, जिनमें से अधिकतर कन्याओं के लिए अपना भाग्य आजमाने आए थे और कुछ केवल राजकुमारों का तमाशा देखने आए थे। सभी जगह यह प्रसिद्ध था कि भीष्म ने जीवनभर ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा

की हुई है इसलिए जब वह स्वयंवर-स्थल में प्रविष्ट हुए तो राजकुमारों ने सोचा कि वह सिर्फ स्वयंवर देखने के लिए आए होंगे। परंतु जब स्वयंवर में सम्मिलित होनेवालों में उन्होंने भी अपना नाम दिया तो अन्य कुमारों को निराश होना पड़ा उन्हें क्या पता था कि दृढ़व्रती भीष्म अपने लिए नहीं अपितु अपने भाई के लिए स्वयंवर में सम्मिलित हुए हैं।

सभा में खलबली मच गई। चारों ओर से भीष्म पर फब्तियां कसी जाने लगीं। माना कि भारत-श्रेष्ठ भीष्म बड़े बुद्धिमान और विद्वान् हैं, किंतु साथ ही बूढ़े भी तो हो चले हैं। स्वयंवर से इनको क्या मतलब? इनके प्रण का क्या हुआ? तो क्या इन्होंने सस्ते में ही यश कमा लिया? जीवन भर ब्रह्मचारी रहने की इन्होंने प्रतिज्ञा की थी? क्या वह झूठी ही थी? इस भांति सब राजकुमारों ने भीष्म की हंसी उड़ाई, यहां तक कि काशिराज की कन्याओं ने भी वृद्ध भीष्म की तरफ से दृष्टि फेर ली और उनकी अवमानना-सी कर आगे की ओर चल दीं।

स्वाभिमानी भीष्म इस अपमान को सह ना सके। मारे क्रोध के उनकी आंखें लाल हो गईं। उन्होंने सभी इकट्ठे हुए राजकुमारों को युद्ध के लिए ललकारा और अकेले तमाम राजकुमारों को हराकर तीनों राजकन्याओं को बलपूर्वक लाकर रथ पर बिठा लिया और हस्तिनापुर को चल दिए।

सौभदेश का राजा शाल्व बड़ा वीर और अभिमानी था। काशिराज की सबसे बड़ी कन्या अंबा उस पर अनुरक्त थी और उसको ही मन से अपना पति मान चुकी थी। शाल्व ने भीष्म के रथ का पीछा किया और उसको रोकने का प्रयत्न किया। इस पर भीष्म और शाल्व के बीच घोर युद्ध छिड़ गया। शाल्व वीर अवश्य था परंतु धनुष के धनी भीष्म के आग कब तक ठहर सकता था! भीष्म ने उसे हरा दिया, किंतु काशिराज की कन्याओं की प्रार्थना पर उसे जीवित ही छोड़ दिया।

भीष्म काशिराज की कन्याओं को लेकर हस्तिनापुर पहुंचे। विचित्रवीर्य के ब्याह की सारी तैयारी हो जाने के बाद जब कन्याओं को विवाह-मंडप में लाने को समय आया तो काशिराज की जेठी लड़की अंबा एकांत में भीष्म से बोली- 'गांगेय, आप बड़े धर्मज्ञ हैं। मेरी एक शंका है, जो आप ही दूर कर सकते हैं। मैंने अपने मन में सौभदेश के राजा शाल्व को अपना पति मान लिया था। इसी बीच आप बलपूर्वक मुझे यहां ले आए। आप धर्मात्मा भी हैं, मेरे मन की बात जानने के बाद अब मेरे बारे में जो उचित समझें, करें।'

-क्रमशः

बेताल पच्चीसी-3

हिन्दी कथा-साहित्य में बेताल पच्चीसी की अपनी अलग पहचान है। इन कथाओं में नीति, संस्कृति और जीवनोपयोगी शिक्षाएं हैं। उसी की एक-एक कथा पढिये हर अंक में। *-गतांक से आगे*

वर्धमान नगर में रूपसेन नाम का राजा राज करता था। एक दिन उसके यहां वीरवर नाम का एक राजपूत नौकरी के लिए आया। राजा ने उससे पूछा कि उसे खर्च के लिए क्या चाहिए तो उसने जवाब दिया, हजार तोले सोना। सुनकर सबको बड़ा आश्चर्य हुआ।

राजा ने पूछा- तुम्हारे साथ कौन-कौन है?

उसने जवाब दिया- मेरी स्त्री, बेटा और बेटी।

राजा को और भी अचम्भा हुआ। आखिर चार जने इतने धन का क्या करेंगे? फिर भी उसने उसकी बात मान ली।

उस दिन से वीरवर रोज हजार तोले सोना भण्डारी से लेकर अपने घर आता। उसमें से आधा ब्राह्मणों में बांट देता, बाकी के दो हिस्से करके एक मेहमानों, वैरागियों और संन्यासियों को देता और दूसरे से बोजन बनवाकर पहले गरीबों को खिलाता, उसके बाद जो बचता, उसे स्त्री-बच्चों को खिलाता, आप खाता। काय यह था कि शाम होते ही ढाल-तलवार लेकर राजा के पलंग की चौकीदारी करता। राजा को जब कभी रात को जरूरत होती, वह हाजिर रहता।

एक आधी रात के समय राजा को मरघट की ओर से किसी के रोने की आवाज आयी। उसने वीरवर को पुकारा तो वह आ गया।

राजा ने कहा- जाओ, पता लगाकर आओ कि इतनी रात गये यह कौन रो रहा है ओर क्यों रो रहा है?

वीरवर तत्काल वहां से चल दिया। मरघट में जाकर देखता क्या है कि सिर से पांव तक एक स्त्री गहनों से लदी कभी नाचती है, कभी कूदती है और सिर पीट-पीटकर रोती है। लेकिन उसकी आंखों से एक बूंद आंसू की नहीं निकलती।

वीरवर ने पूछा- तुम कौन हो? क्यों रोती हो?

उसने कहा- मैं राज-लक्ष्मी हूं। रोती इसलिए हूं कि राजा विक्रम के घर में खोटे काम होते हैं, इसलिए वहां दरिद्रता का डेरा पड़ने वाला है। मैं वहां से चली जाऊंगी और राजा दुःखी होकर एक महीने में मर जायेगा।

सुनकर वीरवर ने पूछा- इससे बचने का कोई उपाय है?

स्त्री बोली- हां, है। यहां से पूरब में एक योजन पर एक देवी का मंन्दिर है। अगर

तुम उस देवी पर अपने बेटे का शीश चढ़ा दो तो विपदा टल सकती है। फिर राजा सौ बरस तक बैठ कर के राज करेगा।

वीरवर घर आया और अपनी स्त्री को जगाकर सब हाल कहा। स्त्री ने बेटे को जगाया, बेटी भी जाग पड़ी। जब बालक ने बात सुनी तो वह खुश होकर बोला- 'आप मेरा शीश काटकर जरूर चढ़ा दें। एक तो आपकी आज्ञा, दूसरे स्वामी का काम, तीसरे यह देह देवता पर चढ़े इससे बढ़कर बात और क्या होगी! आप जल्दी करें।'

वीरवर ने अपनी स्त्री से कहा- अब तुम बताओ।

स्त्री बोली- स्त्री का धर्म पति की सेवा करने में है।

निदान, चारों जने देवी के मन्दिर में पहुंचे।

वीरवर ने हाथ जोड़कर कहा- हे देवी, मैं अपने बेटे की बलि देता हूं। मेरे राजा की सौ बरस की उम्र हो।

इतना कहकर उसने इतने जोर से खांडा मारा कि लड़के का शीश धड़ से अलग हो गया। भाई का यह हाल देख कर बहन ने भी खांडे से अपन सिर अलग कर डाला। बेटा-बेटी चले गये तो दुःखी मां ने भी उन्हीं का रास्ता पकड़ा और अपनी गर्दन काट दी। वीरवर ने सोचा कि घर में कोई नहीं रहा तो मैं ही जीकर क्या करूंगा। उसने भी अपना सिर काट डाला। राजा को जब यह मालूम हुआ तो वह वहां आया। उसे बड़ा दुःख हुआ कि उसके लिए चार प्राणियों की जान चली गयी। वह सोचने लगा कि ऐसाराज करने से धिक्कार है! यह सोच उसने तलवार उठा ली और जैसे ही अपना सिर काटने को हुआ कि देवी ने प्रकट होकर उसका हाथ पकड़ लिया।

देवी बोली- राजन्, मैं तेरे साहस से प्रसन्न हूं। तू जो वर मांगेगा, सो दूंगी।

राजा ने कहा- देवी, तुम प्रसन्न हो तो इन चारों का जिन्दा कर दो।

देवी ने अमृत छिड़ककर उन चारों को फिर से जिंदा कर दिया।

इतना कहकर वेताल बोला- राजा, बताओ, सबसे ज्यादा पुण्य किसका हुआ?

राजा बोला- राजा का।

वेताल ने पूछा- क्यों?

राजा ने कहा- इसलिए कि स्वामी के लिए चाकर का प्राण देना धर्म है, लेकिन चाकर के लिए राजा का राजपाट का छोड़, जाने को तिनके के समान समझकर देने को तैयार हो जाना बहुत बड़ी बात है।

यह सुन वेताल गायब हो गया और पेड़ पर जा लटका। बेचारा राजा दौड़ा-दौड़ा वहां पहुंचा और उसे फिर पकड़कर लाया तो वेताल ने चौथी कहानी कही। **-क्रमशः**

-प्रस्तुति : साध्वी वसुमती

तेजीमाला

किसी समय असम के एक गांव में एक सौदागर रहता था। वह बहुत अमीर था। उसकी एक लड़की थी। लड़की का नाम तेजीमाला था। तेजीमाला बहुत सुंदर थी। परंतु उसकी मां नहीं थी। वह तेजीमाला के छुटपन में ही स्वर्ग सिधार गई थी। उसके पिता ने दूसरा विवाह कर लिया था। तेजीमाला की सौतेली मां बहुत दुष्ट और निर्दयी औरत थी। वह तेजीमाला से कुढ़ती थी और उसके साथ बुरा बरताव करती थी। मगर तेजीमाला बहुत भली और अच्छे स्वभाव की लड़की थी। वह अपनी सौतेली मां का कहा मानती और जैसा वह चाहती वैसा ही किया करती थी। घर में झाड़ू लगाना, बर्तन मलना, जंगल से लकड़ी लाना और ऐसे ही दासियों की तरह तेजीमाला को ही काम करने पड़ते थे। परंतु उसकी सौतेली मां कभी खुश नहीं होती थी। वह उसके कामों में जबरदस्ती खोट निकालती और जरा सी बात पर तेजीमाला को पीटने लगती थी। तेजीमाला के पिता अक्सर घर के बाहर रहते थे क्योंकि उन्हें अपने व्यापार के सिलसिले में लंबी-लंबी यात्राएं करनी पड़ती थीं।

तेजीमाला बड़ी हुई तो पिता को उसके विवाह की चिंता होने लगी। वह तेजीमाला के लिए योग्य वर खोजने लगे। अनेक स्थानों में, अनेक घर देखने के बाद अंत में उन्हें एक योग्य लड़का मिल गया। वह बड़ा ही सुंदर और गुणवान लड़का था। लेकिन चाहते थे। वे उसे लेकर एक लंबी यात्रा पर निकल गए और देश-देश, नगर-नगर की सैर कराते रहे।

उनकी गैरहाजिरी में तेजीमाला अपनी निर्दयी सौतेली मां के पंजे में अकेली रह गई। अब उसके काम का बोझ दिन पर दिन बढ़ने लगा। कपड़ों के नाम पर उसे चिथड़े पहनने को मिलते और खाने के नाम पर बची-खुची जूठन। इसके अलावा जब भी उसकी सौतेली मां को सूझती वह तेजीमाला पर बिना बात बरस पड़ती ओर उसे पीटने लगती थी। इतना होने पर भी तेजीमाला धैर्य से सब कुछ सहती रही। उसने अपनी सौतेली मां के खिलाफ कभी कुछ नहीं कहा।

एक दिन तेजीमाला की सौतेली मां धान कूट रही थी। उसने तेजीमाला को हाथ बंटाने के लिए बुलाया। तेजीमाला उसका हाथ बंटाने लगी। लेकिन जब उसने धान की ढेरी ओखली की तरफ सरकाने के लिए हाथ बढ़ाए तो सौतेली अम्मा ने उसके हाथों पर मूसल दे मारा। बेचारी तेजीमाला के दोनों हाथ कुचल गए। दूसरे दिन उसने ठीक इसी तरह तेजीमाला के पैर कुचल दिए और तीसरे दिन उसका सिर फोड़ डाला। सिर फूटते ही तेजीमाला मर गई। उसके मरते ही उस दुष्ट औरत ने झूठ-मूठ के आंसू बहाना और जोर-जोर से चिल्लाना शुरू कर दिया ताकि पड़ोसियों को यह यकीन हो जाए कि तेजीमाला किसी दुर्घटना के कारण

मरी है। रोना-धोना सुनकर पड़ोसी आ गए। उन्होंने तेजीमाला के मरने पर सहानुभूति प्रकट की और उसके शव को पास ही बगीचे में दफना दिया।

कुछ दिनों बाद तेजीमाला की कब्र से एक बेल उग आई। बेल लगातार बढ़ने लगी। वह सीताफल की बेल थी उसमें कई बड़े-बड़े सीताफल लगे हुए थे।

एक दिन एक आदमी वहां से गुजरा। ताजे-ताजे सीताफल देखकर उसने उन्हें चुराना चाहा। पर जैसे ही उसने हाथ बढ़ाया वैसे ही एक आवाज सुनाई पड़ी, 'ठहरो!' आवाज ने कहा, 'मुझे छूना मत। मैं सीताफल नहीं तेजीमाला हूं।'

आदमी डरकर भाग खड़ा हुआ।

सीताफल की बेल से जो आवाज आई थी उसे तेजीमाला की सौतेली मां ने भी सुना। उसने फौरन बेल उखाड़ी और तोड़ताड़कर फेंक दी। लेकिन जिस जगह सीताफल की बेल थी ठीक वहीं एक मिर्च का पौधा उग आया। उसमें खूब सारी हरी-हरी मिर्चें लगी थीं। उस रास्ते से गुजरते हुए चरवाहों ने ताजी-ताजी मिर्चें देखी तो उन्हें तोड़ना चाहा। पर जैसे ही तोड़ने को हाथ बढ़ाया वैसे ही फिर आवाज सुनाई पड़ी, 'ठहरो!' मुझे छूना मत। मैं मिर्च का पौधा नहीं, तेजीमाला हूं।'

चरवाहों ने समझा कि जरूर कोई भूत बोल रहा है। वे जान बचाकर भागे।

तेजीमाला की सौतेली मां ने मिर्च का वह पौधा भी उखाड़ डाला और इस बार उसे दूर नदी में फेंक दिया। नदी के बीच, जिस जगह मिर्च का पौधा गिरा ठीक वहीं पर, एक सुंदर कमल उग आया।

संयोग से उसी समय तेजीमाला के पिता युवक को लेकर घर लौट रहे थे। वे एक नाव में बैठकर उसी नदी से आ रहे थे। जब युवक ने नदी के बीच उगा सुंदर कमल देखा तो उसे तोड़ने के लिए उपना हाथ आगे बढ़ा दिया।

'नहीं, मुझे छूना मत,' कमल ने कहा, 'मैं कमल नहीं, तेजीमाला हूं। मुझे मेरी सौतेली मां ने मार डाला था।'

ये शब्द सुनकर तेजीमाल के पिता भौचक रह गए।

'मैं तुम्हारा बाप हूं।' उन्होंने पागलों की तरह चिल्लाकर कहा, 'मैं अभी-अभी वापस आया हूं। मेरी बेटी! मेरी दुलारी तेजीमाला! आ, मेरे पास आ।'

अपने पिता को स्नेहभरी वाणी सुनकर कमल का वह सुंदर फूल तेजीमाला बन गया। तेजीमाला अपने पिता से लिपट गई और अपनी दुखभरी कहानी सुनाने लगी।

फिर वे तीनों घर आए। घर आते ही उसके पिता ने उस दुष्ट सौतेली मां को घर से निकाल दिया। तेजीमाला की शादी हो गई। वह अपने पति तथा पिता के साथ सुख से रहने लगी।

-प्रस्तुति : साध्वी पद्‌मश्री

आत्मविश्वास सफलता का मुख्य रहस्य

- मनुष्य अपनी क्षमताओं की कभी कदर नहीं करता, वह हमेशा उसी चीज की आस लगाए रहता है जो उसके पास कुछ नहीं है।
- करने का कौशल आपके करने से ही आता है
- आत्मविश्वास, सफलता का मुख्य रहस्य है।
- जिसमें आत्मविश्वास नहीं, उसमें अन्यों चीजों के प्रति विश्वास कैसे उत्पन्न हो सकता है।
- हास्यवृत्ति, आत्मविश्वास (आने) से आती है।
- जिसने अपने को वश में कर लिया है, उसकी जीत को देवता भी हार में नहीं बदल सकते।
- मुस्कुराओ, क्योंकि हर किसी में आत्मविश्वास की कमी होती है और किसी दूसरी चीज की अपेक्षा मुस्कान उनको ज्यादा आश्वस्त करती है।
- आत्मविश्वास बढ़ाने की यह रीति है कि वह करो जिसको करते हुए डरते हो।
- यह आत्मविश्वास रखो कि तुम पृथ्वी के सबसे आवश्यक मनुष्य हो।

-प्रस्तुति : नमन जैन

मानव मंदिर का योग कैंप भारतीय सेना में

मानव मंदिर के संस्थापक आचार्यश्री रूपचंद्र जी महाराज के शिष्य योगी अरूण तिवारी व उनके सहयोगी डॉ. सोहनवीर सिंह और डॉ. दिलीप तिवारी ने सेना के 9 इन्फैन्ट्री पाईन डिविजन, हेडक्वाटर में योग कार्यक्रम प्रस्तुत किये। योगी अरूण जी ने अष्टांग-योग, डॉ. सोहन जी ने सप्तचक्रीय-योग एवं डॉ. दिलीप जी ने एक्युप्रेशर व नेचरोपैथी पर व्याख्यान दिये, और योगअभ्यास के प्रयोग करवाये। इस कार्यक्रम के आयोजक कर्नल एस.के. गर्ग का कहना था कि इस तरह का सेना में पहला कार्यक्रम है। 9 इन्फैन्ट्री पाईन डिविजन में लगभग दस हजार जवान हैं। 20 व 21 नवम्बर 2013 को जवानों, महिलाओं और अधिकारियों के लिये अलग-अलग समय पर पांच योग कार्यक्रम आयोजित किये गये। सब ने ऐसे योग कार्यक्रम को बार-बार आयोजित करने के लिये निवेदन किया। सब का यह कहना था कि हमने योग के बारें में सुना भी है और करते भी आये हैं परन्तु योगी जी की योग सिखाने की कला अनूठी है। परिणाम पहली बार से ही आता है। अनेकों वर्षों से कर्नल गर्ग आचार्य श्री रूपचन्द्र महाराज, मानव मंदिर गुरूकुल और सेवाधाम से बड़ी आत्मीयता से जुड़े हैं। कार्यक्रम में मानव मंदिर स्टाफ-वेलफेयर के इंचार्ज श्री सुरेश चन्द्र जी भी मौजुद थे।

प्राकृतिक औषधि पालक

आयुर्वेद चिकित्सा ग्रंथ भावप्रकाश निघण्टु में पालक को श्वास, पित्त, रक्त व श्लैष्म (कफ) से उत्पन्न होने वाले रोगों को नष्ट करने वाला लिखा है। प्राकृतिक रूप से पालक में लौह तत्व भरपूर मात्रा में पाया जाता है। रक्ताल्पता (एनीमिया) के रोगी इसका कुछ समय तक सब्जी के रूप में सेवन करें तो उनके शरीर में लौह तत्व की पूर्ति होने के साथ रक्त की कमी दूर होने से रक्ताल्पता रोग भी नष्ट होता है। पालक के नियमित सेवन से नेत्रों की ज्योति तीव्र होती है।

पालक में रक्तवर्द्धक तत्व 'फोलिक अम्ल' विशेष मात्रा में उपस्थित रहता है। बच्चों को पालक की सब्जी खिलाने से उनके शरीर में लौह तत्व की पूर्ति होती है। रक्तवर्द्धक होने के साथ पालक रक्त को शुद्ध भी करता है। कोष्ठबद्धता वाले रोगी स्त्री-पुरुषों के लिए पालक अत्यंत गुणकारी प्राकृतिक औषधि है। कुछ दिन तक पालक की सब्जी खाने से कोष्ठबद्धता नष्ट होती है।

सुपाच्य होने के कारण पालक गर्भावस्था में स्त्रियों के लिए अधिक गुणकारी होता है। गर्भावस्था में और प्रसव के बाद स्त्रियों में रक्त की कमी हो जाती है। गर्भावस्था में पौष्टिक और सन्तुलित आहार नहीं मिल पाने के कारण गर्भवती और गर्भस्थ शिशु को हानि पहुंचने की सम्भावना रहती है। गर्भवती स्त्रियों में पालक लौह तत्व (आयरन) और दूसरे विटामिनों की पूर्ति करके उन्हें शक्ति और स्फूर्ति देता है।

कैल्शियम के अभाव में गर्भावस्था में स्त्रियां चाक, मिट्टी, राख आदि दूषित चीजें खाने लगती हैं। इनसे गर्भवती और शिशु को बहुत हानि पहुंच सकती है। पालक की नियमित सब्जी खाने से कैल्शियम की कमी पूरी होती है।

पालक में जल की मात्रा सबसे अधिक होती है। 100 ग्राम पालक में 92 प्रतिशत जल की मात्रा होती है। पालक में कार्बोहाइड्रेटस 3.5 ग्राम, प्रोटीन 2 ग्राम, वसा 1 ग्राम, फास्फोरस 21 मिलीग्राम, फोलिक अम्ल 127 मिलीग्राम, लौहतत्व 6 मिलीग्राम और कैल्शियम 65 मिलीग्राम होता है।

विशेषज्ञों के अनुसार पालक में आयोडीन और लेसिथीन नामक गुणकारी तत्व होते हैं। आयोडीन की कमी पूरी होने के कारण पालक घेंघा (थायरायड) रोग को उत्पन्न नहीं होने देता है।

प्राकृतिक चिकित्सकों के अनुसार पालक सभी स्त्री-पुरुषों और बच्चों के लिए गुणकारी टॉनिक है। फॉस्फोरस की पर्याप्त मात्रा होने के कारण मस्तिष्क का काम करने वाले स्त्री-पुरुष और छात्रों के लिए पालक बहुत गुणकारी होता है। 20 से 30 ग्राम पालक का रस पिलाने से स्नायुओं को भरपूर शक्ति मिलती है। स्मरणशक्ति विकसित होती है। मस्तिष्क के तनाव और अधिक काम करने पर हुई थकावट भी नष्ट होती है।

त्वचा के रोग विकार और रक्त विकृति से उत्पन्न रोग-विकारों को नष्ट करने में पालक प्राकृतिक औषधि का काम करता है। 10-20 ग्राम पालक का रस प्रतिदिन प्रातः और सायं दो बार सेवन करने से अनेक त्वचा के रोग विकार नष्ट होते हैं। पालक के रस में गाजर और टमाटर का रस मिलाकर पीने से स्वादिष्ट लगता है और शरीर की शुष्कता भी नष्ट होती है।

- पालक के रस को प्रतिदिन सेवन करने से खाज-खुजली भी नष्ट होती है। रक्त विकृति दूर होने के साथ में शरीर में रक्त का अधिक निर्माण होने से चेहरे पर लालिमा विकसित होती है और त्वचा का सौंदर्य निखरता है।
- कामला के रोगी को 30 ग्राम से 40 ग्राम पालक का रस और 10 ग्राम चौलाई का रस मिलाकर पीने से बहुत लाभ होता है।
- 40 ग्राम पालक के रस में 80 ग्राम गाजर का रस मिलाकर पीने से नेत्ररोग रतोंधी (रात में कम दिखाई देना) रोग शीघ्र नष्ट होता है। नेत्र ज्योति की वृद्धि होती है।
- अनिद्रा के रोगियों के लिए पालक बहुत गुणकारी होता है।
- वक्षस्थल में कफ एकत्र होने, अधिक खांसी और श्वास की विकृति होने पर पालक रस में मधु और थोड़ा-सा काली मिर्च का चूर्ण मिलाकर सेवन करने से उक्त रोग-विकार शीघ्र नष्ट होता हैं।
- पालक के पत्तों को उबाल कर उसके जल को छान कर गरारे करने से गले के विकार शोथ नष्ट होते हैं। शीतऋतु में होने वाली गले की पीड़ा भी नष्ट होती है।
- पालक के पत्तों को अजवायन के साथ पीस कर फिर थोड़े से जल में मिला कर सेवन करने से उदर कृमि शीघ्र नष्ट होते हैं।
- शारीरिक निर्बलता को नष्ट करने के लिए 50 ग्राम पालक का रस, 100 ग्राम गाजर का रस, 50 ग्राम चुकंदर का रस मिलाकर पिलाएं।
- पालक के रस में गाजर का रस मिलाकर पिलाने से रक्त विकार नष्ट होने के साथ रक्त की वृद्धि होती है। 100 ग्राम पालक के रस में मधु मिलाकर पीने से रक्त की कमी पूरी होती है। त्वचा में निखार आता है।
- पालक के रस में अनार का रस मिलाकर सेवन करने से नाक से होनेवाला रक्त स्राव नष्ट होता है। पालक के रस में प्याज व पोदीने का रस मिलाकर पीने से वमन नष्ट होती है।

- पालक के 50 ग्राम रस में कुल्थी का सूप मिलाकर नीबू का रस डालकर सुबह-शाम सेवन करने से मूत्र का अवरोध नष्ट होता है। मूत्राशय की अश्मरी (पथरी) गल कर निष्कासित होती है।
- अग्निमांघ, अजीर्ण, उदरशूल और अरुचि (भोजन नहीं खाने की इच्छा) विकार पालक के रस के सेवन से शीघ्र नष्ट होते हैं।

-प्रस्तुति : योगी अरूण तिवारी

पहेलियां

1. सवा लाख के मेरे दांत
खाता नहीं दिखाता हूं
छोटी आंख सूप का कान
नाक हिलाता जाता हूं।

2. उछल कूदकर फांदू डाल
मानव है मेरे ही लाल
बजे मदारी का जब डमरू
बांध पांव में नाचूं घुंघरू।

3. दो भाई एक रंग के
गहरा उनका नाता।
एक भाई बिछड़ गया तो
दूजा काम आ जाता।

4. पृथ्वी की तरह मैं हूं गोल
अंदर हवा, बाहर चमड़े का खोल
चौवालीस चरणों की ठोकर खाती
मनोरंजन के काम आती।

5. सुंदर आंखें तेज है चाल
चिकनी खाल सुहाने बाल
घास पात मेरा आहार
सिंही का सिर पर श्रृंगार।

6. अंगुली भर का पेड़
चार हाथ का पत्ता
फल लगे अलग-अलग
पाके इकट्ठा।

7. एक कांच के गोले में
डाले रहता वह डेरा
पहरा देता रहता रात भर
सो जाता देख सवेरा।

उत्तर : (1) हाथी (2) बंदर (3) जूते (4) फुटबाल (5) हिरण (6) केले का पेड़ (7) बल्ब

-प्रस्तुति : मो. गुलाम समदानी

मासिक राशि भविष्यफल-दिसम्बर, 2013

○ डॉ. एन.पी मित्तल, पलवल

मेषः- मेष राशि के जातकों के लिए व्यापार व्यवसाय की दृष्टि से इस माह अवरोधों के चलते अच्छी आमदनी के योग है किन्तु खर्चे भी मुँह खड़े रहेगें। दूसरों की मदद करेंगे तो भी कोई ऐहसान नहीं मानेंगा। घर के कार्यों में व्यस्तता रहेगी। कुछ लोग धार्मिक यात्रा पर भी जा सकते हैं। समाज में मान-प्रतिष्ठा बनी रहेगी। दाम्पत्य जीवन सामान्य रहेगा। किन्ही जातकों को सन्तान सुख भी प्राप्त हो सकता है।

वृषः- वृष राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह अशुभ फल दायक ही कहा जायेगा। आमदनी कम तथा खर्चा अधिक होने के आसार हैं। काम बनते बनते अधूरे रह सकते हैं। परिवार में असामन्जस्य की स्थिति रहेगी जिससे मानसिक अशान्ति का अनुभव होगा। दाम्पत्य जीवन में भी मिठास रहने के आसार हैं।

मिथुनः- मिथुन राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह संघर्षपूर्ण ही रहेगा। कुछ सरकारी कर्मचारियों को समय अनुकूल हो सकता है। व्यवसायिओं का अन्तिम सप्ताह अच्छा रहने की उम्मीद है। कुछ जातकों के लिये धार्मिक अनुष्ठान पूर्ण करने का तथा यात्रादि का समय है। दाम्पत्य जीवन में सामन्जस्य बनाकर रखना होगा। अपनी माताजी की सेहत का विशेष ध्यान रखें।

कर्कः- कर्क राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह कतिपय अवरोधों के चलते लाभ देने वाला है किन्तु व्ययाधिक्य के भी आसार हैं। शत्रु सिर उठायेंगे किन्तु आप उन्हें अपने अनुकूल करने में कामयाब होंगे। घर-परिवार में सामन्जस्य बना रहेगा। दम्पति मिलकर जिम्मेवारियों का वहन करने में सक्षम होंगे।

सिंहः- सिंह राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह परिश्रम साध्य काम देने वाला है। फिर भी माह का उत्तरार्ध, पूर्वाध से अच्छा रहेगा। अतः पूर्वाध में किसी नई योजना का क्रियान्वयन करें। निराशा ही हाथ लगेगी। दाम्पत्य जीवन में सामन्जस्य बनाए रखें। बुजुर्गों का आशीर्वाद लें। स्वास्थ्य के प्रति लापरवाही न बरतें।

कन्याः- कन्या राशि के जातकों के लिये व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह शुभ फल दायक नहीं है। आय से व्यय अधिक होने आसार है। किसी पर भी आँख मूंद कर विश्वास करना हानि कारक हो सकता है। पूरा परिश्रम करके भी फल अपूर्ण ही मिलेगा। बिना कारण किसी के मामले में टांग न अड़ाएं। कार्य उतना ही करें जितना आप अपने बल बूते पर कर सकें। स्वास्थ्य के प्रति सचेत रहें।

तुलाः– तुला राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह कुल मिलाकर अच्छा ही रहेगा, फिर भी पूर्वार्ध उत्तरार्ध से अधिक बेहतर है। भूमि भवन के क्रय-विक्रय का योग बन सकता है। किसी नये व्यक्ति से पहचान बनने से लाभ मिलेगा। घर-परिवार में सौहार्दपूर्ण वातावरण रहेगा। यश-मान-इज्जत बनी रहेगी। स्वास्थ्य कुछ गड़बड़ा सकता है।

वृश्चिकः– वृश्चिक राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह शुभ फल दायक ही कहा जाएगा। केवल तृतीय सप्ताह में कुछ अवरोध आ सकते हैं। नये लोगों से सम्पर्क लाभ दायक रहेगा। छोटी-बड़ी यात्राओं का योग है। कुल मिलाकर यह माह अनुकूल फल दायक ही कहा जाएगा। कुछ जातकों को स्थानन्तरण या व्यवसायान्तरण सुख-कर प्रतीत होगा।

धनुः– धनु राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह संभल कर चलने का है। आय से व्यय अधिक होने के आसार है। किसी पर भी आवश्यकता से अधिक विश्वास करना नुकसान देह हो सकता है। किसी नई योजना के क्रियान्वयन से पहले दो बार सोचें। अपने सामान की देखभाल स्वंय करें। वर्ना हानि हो सकती है। घर-परिवार में कोई धार्मिक अनुष्ठान अथवा मांगलिक कार्य होने से खुशी का माहौल रहेगा। मासारम्भ में कुछ जातकों के बिगड़े काम बनने की आशा है।

मकरः– मकर राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह सामान्य फल दायक है। आपसी विवाद से दूर रहें। घर परिवार में भी सामन्जस्य बिठाना होगा। कुछ जातकों के रूके हुए काम बन सकते हैं। उसके लिए भरपूर प्रयास करना होगा। कुछ जातक घर की साज-सज्जा की ओर उन्मुख रहेंगे। समाज में मान-प्रतिष्ठा बनी रहेगी।

कुम्भः– कुम्भ राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह अधिकांशतः शुभफल दायक है। किसी नई योजना का क्रियान्वयन हो सकता है। कुछ नये लोगों से मुलाकत लाभ दायक सिद्ध होगी। कुछ जातकों का रूका हुआ पैसा मिल सकता है। व्यवसायियों को उच्चाधिकारियों का सहयोग मिलेगा। जातकों को किसी न किसी कार्य में परिश्रमरत रहना पड़ेगा। समाज में मान-प्रतिष्ठा बनी रहेगी।

मीनः– मीन राशि के जातकों के लिए व्यापार-व्यवसाय की दृष्टि से यह माह उतार-चढ़ाव लिए रहेगा। पूर्वाध कुछ अच्छा तथा उत्तरार्ध आवश्यक परिश्रम करायेगा। कारोबार पर स्वंय ध्यान देने की आवश्यकता है। क्रोध करने से हानि हो सकती है। संतान की ओर से कोई शुभ सूचना मिल सकती है। कुछ जातकों के अदालती कार्य भी सुलझ सकते हैं। दाम्पत्य जीवन में सामनजस्य बनाए रखें। घर-परिवार में कोई धार्मिक अनुष्ठान या मांगलिक कार्य हो सकता है। समाज में मान-प्रतिष्ठा बनी रहेगी।

–इति शुभम्

भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का अवमूल्यन चिंताजनक

–आचार्य रूपचन्द्र

देश की वर्तमान धार्मिक तथा राजनैतिक दशा और दिशा के सम्बन्ध में पूज्य आचार्य रूपचन्द्रजी ने अपने एक विशेष वक्तव्य में कहा– आज यह अत्यंत चिंता का विषय है धर्म से भी ऊंचा कद पथों और संप्रदायों का होता जा रहा है, संत-पुरूषों से भी बड़ा कद कथा-वाचकों का होता जा रहा है। राष्ट्रीय चरित्र और नैतिक मूल्यों से भी बड़ा कद धन ओर कुर्सी का होता जा रहा है। देश से भी बड़ा कद राजनैतिक दलों का होता जा रहा है। परिणामतः हम शालीन भाषा भूल रहे हैं, शिष्ट आचरण भूल रहे हैं, विचारों की उदारता भूल रहे हैं, अपने से असहमत आवाज को सुनने तक की सहनशीलता खो रहे हैं।

आपने कहा– स्थिति इतनी चिन्ताजनक है कि संघ और संप्रदाय को धर्म और अध्यात्म का वाना पहनाया जा रहा है। स्वार्थों को सिद्धान्तों का तथा खुशामद और चापलूसी को समर्पण एवं अटूट आस्था की संज्ञा दी जा रही है। उसी का परिणाम है–

कभी तो खटकता था आंखों में तिनका भी,
अब आराम से शहतीर समाया है लोगो!
सुना है सूरज की नजरों के आगे भी
इत्मीनान से अंधेरा छाया है लोगो!
हो रही है घोषणा चौराहे-चौराहे पर
डाकू करेंगे डाकुओं का सफाया लोगो!
मजहब, सियासत और पैसे ने मिलकर
देश की छाती पर जश्न मनाया है लोगो!
गुल की तस्वीर को ऐसे सजाया है लोगो
दिन-दहाडे बुलबल को उल्लू बनाया है लोगो।

आपने कहा– फिर भी निराशा और हताशा की जरूरत नहीं है। अन्धियारा तब तक ही टिकता है जब तक सूर्योदय न हो। झूठ और पाखंड तब तक ही टिकता है जब तक सत्य और अध्यात्म प्रकट न हो। रात के पश्चात् प्रातःकाल का आना निश्चित है। रात लम्बी हो सकती है। किन्तु अन्धेरे का अंत निश्चित है। उजाला प्रकट होना निश्चित है। हां, हमें इतना अवश्य करना है जब तक सूर्योदय न हो, इक-न-इक शम्आ, एक-न-एक दीप जलाते हुए हमें रोशनी का माहौल बराबर बनाये रखना है–

इक-न-इक शम्आ अंधेरे में जलाए रखिये
सुबह होने को है माहौल बनाए रखिये।

जैन आश्रम, मानव मंदिर मिशन परिसर में पूज्य आचार्यश्री रूपचन्द्रजी तथा पूज्या प्रवर्तिनी साध्वीश्री मंजुलाश्री जी के मार्ग-दर्शन में मानव मंदिर गुरूकुल तथा सेवाधाम हॉस्पिटल की प्रवृत्तियां सुचारू रूप से चल रही है। पिछले दिनों दो दिनों का योग-कक्षाएं भी रहीं।

हर वर्ष की तरह मानव मंदिर मिशन का वार्षिक समारोह एक दिसम्बर, 2013, रविवार प्रातः 10 बजे मानव मंदिर परिसर, नई दिल्ली में रहेगा। गुरूकुल के बच्चों द्वारा योग-प्रदर्शन तथा सांस्कृतिक प्रस्तुतियां दी जाएंगी। पूज्य गुरूदेव तथा पूज्या साध्वीश्री के विशेष प्रवचन रहेंगे ही। आप सभी इस समारोह में सादर आमंत्रित हैं।

-श्री कृष्ण-जन्माष्टमी पर आयोजित चित्र-कला प्रतियोगिता में पुरस्कार-प्राप्त मानव मंदिर गुरूकुल के बच्चे अपने चित्रों के साथ। पूज्य गुरूदेव, डॉ. विनीता गुप्ता तथा निर्णायक जज डॉ. भटनागर।

-इन्फैन्ट्री डिविजन सेना मुख्यालय में योग प्रशिक्षण के पश्चात् योगी अरूण तिवारी व कर्नल एस. के. गर्ग (मध्य में) डॉ. सोहनवीर सिंह (दाएं से दूसरे स्थान पर) श्री सुरेश शर्मा व डॉ. दीलीप तिवारी (बाएं से दूसरे स्थान पर)।

-योग प्रशिक्षण शिविर में योग करवाते हुए योगी अरूण तिवारी व साथ में हैं डॉ. सोहनवीर तथा डॉ. दिलीप तिवारी।

-योगाभ्यास की मुद्रा में सेना के जवान।